भाषा की उत्पत्ति

जब हम भाषा पर विचार करने चलते हैं तो सब होता है पहला प्रश्न यह उठता है कि भाषा की उत्पत्ति हुई कैसे?

इस प्रश्न पर विचार अत्यंत प्राचीन काल से होता आया है पर भाषा विज्ञान वेता इस प्रश्न को भाषा विज्ञान का क्षेत्र नहीं समझते क्योंकि उसके लिए ठोस आधार उनकी आवश्यकता पड़ती है, किंतु भाषा की उत्पत्ति लाख वर्ष पूर्व हुई थी। इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं है। हम केवल अनुमान लगा सकते हैं और अनुमान भाषा विज्ञान का काम नहीं। 18 66 इस मिशन में जब पेरिस में' भाषा विज्ञान परी' की स्थापना की तो संस्थापकों में भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न को सदा सर्वदा के लिए भाषा विज्ञान से निकाल दिया।

जो भी कुछ हो लेकिन इस प्रश्न पर अत्यंत प्राचीन काल से विचार होता आया है। कई वादों और सिद्धांतों का इस प्रश्न के उत्तर स्वरूप संसार के सामने रखा है। भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्राचीनतम विचार यूनानीयों द्वारा व्यक्त किए गए हैं। इसी प्रकार भारत, मिस्त्र, अरब तथा अन्य देशों की धार्मिक और भाषा शास्त्र विषयक पुस्तकों में भाषा की उत्पत्ति के संबंध में कुछ न कुछ बातें मिल जाती है।

1) **दैवी उत्पत्ति सिद्धांत : (डिवाइन) –** भाषाओं की उत्पत्ति के संबंध में यह सबसे प्राचीन मत है। लोगों का विश्वास रहा है और कुछ अंशों में आज भी है कि संसार और उसकी अनेकानेक चीजों की भांति ही भाषा को भी भगवान ने ही बनाया। भारतीय पंडित वेदों को अपौरुषेय मानते रहे हैं। उनका दृढ़ विश्वास रहा है कि संस्कृत को ईश्वर ने बनाया और फिर उसी भाषा में वेदों की रचना की। संस्कृत को' वेद भाषा' कहने में भी उनके इसी विश्वास की ओर संकेत है। संस्कृत भाषा के व्याकरण के मूलाधार अर्थात पानी नहीं के 14 सूत्र शिव के डमरू से निकले है ऐसा माना जाता है। संस्कृत देववाणी होने के कारण यह सभी भाषाओं की मूल जननी है। बौद्ध लोग पाली को मूल भाषा मानते हैं तो जैन अर्धमागधी को मूल भाषा मानते हैं।

   कुछ लोगों को कहना था कि मनुष्य जन्म से ही एक भाषा सीख कर आता है और वही भाषा सबसे पुरानी भाषा अर्थात दैवी भाषा है। इसी का निश्चय करने के लिए मिस्र के राजा सैमिटिक्स ने 2 बच्चों को जन्म के बाद ही अलग रखा था। उसके पास जाने वालों को कुछ बोलने की मनाई थी। बड़े होने पर उनके मुंह से केवल 'बेकोस' शब्द ही सुना गया। रोटी देने वाले फिजीशियन नौकर ने गलती से कभी इस शब्द का उच्चारण उसके सामने कर दिया था। 'बेकोस' फिजिशियन शब्द है और उसका अर्थ है 'रोटी'।

   अकबर ने भी इस प्रकार का प्रयोग किया था जो बहुत सफल रहा। फल यह हुआ कि लड़के गूंगे निकले। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बच्चा मां के पेट से कोई भाषा सीख कर नहीं आता अर्थात ईश्वर प्रदत्त कोई भाषा नहीं है। ऐसा मानना अंधविश्वास मात्र है।

   - **समीक्षा –** 1] यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त है तो विभिन्न भाषाओं में इतना भेद क्यों है?
     2] संसार के गधे, घोड़े, भैसें, कुत्ते, आदमी एक जैसे बोलते किंतु मनुष्य में वह एकरूपता नहीं है।
     3] यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त होती तो कदाचित आरंभ से ही वह विकसित होती किंतु इतिहास में इस के उल्टे प्रमाण मिलते हैं। अतः दिव्योत्पत्ति सिद्धांत इन शंकाओं का समाधान नहीं कर पाता।

2) **संकेत सिद्धांत : (सिंबल) –** इसे प्रतीकवाद, स्वीकारवाद, संकेत सिद्धांत, संकेतवाद भी कहा जाता है। कुछ विद्वानों का कहना है कि प्रारंभ में मनुष्य पशु उनके समान सिर, आंख, हाथ, पैर आदि को चलाकर अपना अभिप्राय व्यक्त करता था लेकिन जब उसने देखा कि इन संकेतों से काम नहीं हो रहा है तो उन्होंने इकट्ठा होकर आवश्यक वस्तुओं को कुछ ध्वनि संकेत या संकेतिक नाम दिए और यहीं से भाषा का प्रारंभ हो गया।

   - **समीक्षा –** इस सिद्धांत में भी अनेक असंगतियां है।
     1] यदि कोई भाषा नहीं थी तो आरंभ में लोग इकट्ठा कैसे हुए?
     2] एकत्र भी हो गए तो भी शब्द कैसे गढ़े गए?

by Dr. Sangita Chitrakoti

3] यदि बिना भाषा के इतना महत्वपूर्ण विचार विमर्श और निर्णय हो सकता था तो भाषा की क्या आवश्यकता थी? उस वक्त जो माध्यम विचारों को समझने के लिए था वही समर्थ था।

4] भाषा थी ही नहीं तो उसकी आवश्यकता क्यों महसूस हुई? आज भी बंदरो या बैलों को उसकी आवश्यकता कहाँ महसूस हुई? यदि होती तो वे भी कोई महासभा करके अपने लिए भाषा बना लेते और विचारों को व्यक्त कर पाते।

3) रणन सिद्धांत : (डिंङ् डांङ) धातु सिद्धांत – डिंङ् डांङ का अर्थ है 'घंटे की आवाज' । इस सिद्धांत की ओर सर्वप्रथम संकेत प्लेटो ने किया था। किंतु इसको पल्लवित किया मैक्समूलर ने। रणन सिद्धांत के अनुसार शब्द और अर्थ में एक प्रकार का रहस्यात्मक नैसर्गिक संबंध है। संसार में हर वस्तु की अपनी ध्वनि हुआ करती है जो किसी वस्तु से आहत होने पर व्यक्त हो जाती है।

उदाहरणार्थ – यदि हथौड़े से किसी धातु, लकड़ी, इंट, पत्थर, शीशे आदि पर आघात करें तो उनसे विभिन्न प्रकार की ध्वनि उत्पन्न होगी और उन ध्वनियों को सुनकर ही कोई पहचान ले सकता है कि वह किस वस्तु से उत्पन्न हुई। कोई वस्तु गिर जाने पर केवल आवाज से हम समझ सकते हैं कि क्या गिरा है? शीशे के गिलास की अपनी आवाज कांसे के गिलास से भिन्न होती है, जो आघात पड़ने पर सुनाई देती है इसी ध्वनि को रणन कहते हैं। सृष्टि के आरंभ में मानव वाणी विहीन था, किंतु जब वह संसार की विभिन्न वस्तुओं के संपर्क में आया तो उन वस्तुओं का उस पर प्रभाव पड़ा और अनायास ही उन वस्तुओं के बोधक शब्द उसके मुँह से निकले। जैसे - विस्तृत जल प्रवाह को देखकर उसके मुँह से 'नदी' शब्द निकल पड़ा। पशु विशेष को देखते ही 'अश्व' शब्द प्रकट हुआ। इसी तरह संसार के समस्त वस्तुओं के शब्द बन गए। भाषा का निर्माण होने के बाद प्राचीन मनुष्य में जो शक्ति थी वह शक्ति नहीं रही। अतः वह धीरे-धीरे नष्ट हो गई। आज का मनुष्य इसीलिए उससे शून्य है।

- **समीक्षा –**

1] पहली बात यह है कि आदि मनुष्य के संबंध में इस प्रकार के कल्पना के लिए कोई आधार नहीं है। यह निराधार कल्पना है। अतः सर्वथा त्याज्य है।

2] ऐसे बहुत से भाषा परिवार है जिसमें धातु जैसी कोई चीज नहीं है।

3] भाषा केवल धातु से नहीं बनती। प्रत्यय, उपसर्ग आदि घटकों की आवश्यकता पड़ती है। उनके लिए कुछ नहीं कहा गया है।

आगे चलकर स्वयं मैक्समूलर को यह सिद्धांत इतना सदोष प्रतीत हुआ कि उसने इस सिद्धान्त को छोड़ दिया।

4) आवेग सिद्धांत : (पुह- पुह) मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धांत –

मनोभावाभिव्यक्ति, मनोराग व्यंजक, आवेग सिद्धांत, शब्दमूलकता वाद, पुह-पुह वाद, मनोभावाभिव्यंजकतावाद आदि कुछ अन्य नामों का भी इसके लिए हिंदी में प्रयोग होता है। इस सिद्धांत के अनुसार आरंभ में मनुष्य विचार-प्रधान प्राणी न होकर अन्य पशुओं की भांति भाव-प्रधान था और प्रसन्नता, दुख, विस्मय, घृणा, आदि के भावावेश में उसके मुख से ओ, छी, धिक, आह, ओह, फ़ाई, पिश आदि शब्द सहज ही निकल जाया करते थे। धीरे-धीरे इन्हीं शब्दों से भाषा का विकास हुआ।

- **समीक्षा –**

इस सिद्धांत के अनेक दोष है –

1] ये शब्द आवेगात्मक तीव्रता के ही बोधक है। अतः इससे संप्रेषण नहीं हो सकता।

2] ये शब्द सोच-विचार कर नहीं बोले जाते। आवेग की अतिरेक की स्थिति में अपने आप मुंह से निकल पड़ते हैं।

3] विभिन्न भाषाओं में इस वर्ग के शब्दों में एकरूपता नहीं है उदाहरणार्थ अंग्रेजी में हर्ष के लिए हुर्रा (hurrah) शौक के लिए एलास (Alas) तिरस्कार के लिए फाइ (Fie) अनुमोदन के लिए ब्रेवो (Bravo) आदि शब्दों का प्रयोग होता है। पीड़ा की अभिव्यक्ति के लिए जर्मन में आउ (Au) फ्रांसीसी में आहि (Ahi)
अंग्रेजी में ओह (Oh) शब्द चलते हैं।

4] इन शब्दों से पूरी भाषा पर प्रभाव नहीं पड़ता।

5] इन ध्वनियों को लिपिबद्ध करना संभव नहीं। जैसे – खेद व्यक्त करते समय हम च-च-च करते

हैं, परंतु वस्तुतः इनका कोई अर्थ नहीं है।

5) श्रमध्वनि सिद्धांत : (यो-हे-हो) --

इसे श्रम- परिहरणमूलकतवाद भी कहते है। इनके जन्मदाता 'न्वायर' नामक विद्वान थे। उनका सिद्धांत था कि परिश्रम का कार्य करते समय सांस के तेजी से बाहर-भीतर आने जाने के साथ-साथ स्वरतंत्रियों के विभिन्न रूपों में कंपन होने लगता है। कुछ ध्वनियां अनायास निकलने लगती है – उदा. – कपड़ा धोते समय धोबी 'हिच्छों-हिच्छों' या छियों-छियों बोलता रहता है। मल्लाह थकान के लिए यो- हे-हो कहते हैं। इसी प्रकार पालकी ढोते समय कहार, मजदूर आदि किसी न किसी प्रकार की ध्वनि निकालते हैं। इसीसे भाषा का प्रारंभ हुआ।

❖ समीक्षा –

1] यह सिद्धांत ऊपर के सभी सिद्धांतों से गया-बिता है क्योंकि इन शब्दों का भाषा में कोई स्थान नहीं है।

6) अनुकरण सिद्धांत : (बोउ- बोउ) –

इस सिद्धांत का प्रतिपादन भी अनेक विद्वानों ने किया है कि भाषा की उत्पत्ति अनुकरण के आधार पर हुई है। मनुष्य ने अपने आस -पास के जीवों और चीजों आदि की आवाज के अनुकरण पर शब्द बनाए और उसी पर भाषा का महल खड़ा हुआ।

उदाहरणार्थ – का-का रटने वाले को 'काक', कू-कू कूकनेवाली कोकिल, झर-झर झरनेवाले जल प्रवाह को" निर्झर' या झरना' कहा जाने लगा। दर-दर करनेवाले दर्दुर (मेंढक)। इसी तरह कल-कल, चट-पट, छम-छम, गड़गड़ाहट, घरघराहट, कड़कडाना, बड़बड़ाना, खटखटाना, चक-चक, चकमक, जगमग आदि।

भों-भों का अँग्रेजी रूपांतर बोउ-बोउ है। यह नाम मैक्समूलर ने विनोद में रख दिया।

❖ समीक्षा –

1] इस सिद्धांत को स्वीकार करने पर भी भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न हल नहीं होता क्योंकि अनुकरणात्मक शब्दों की संख्या बहुत कम है।

2] अलग-अलग भाषाओं के अनुकरण में एकरूपता नहीं है। जैसे –

संस्कृत	हिंदी	अंग्रेजी	जर्मन
निर्झर	झरना	स्ट्रीम	स्ट्रोम

7) इंगित सिद्धान्त : (जेस्चर) –

इस सिद्धांत का सर्वप्रथम संकेत राय ने किया किंतु उसे पल्लवित किया अलेक्जेंडर जोहानसन ने। उनका विवेचन भारत यूरोपीय भाषाओं के अतिरिक्त प्राचीन चीनी, हिब्रू, तुर्की, तथा कतिपय अन्य भाषाओं पर आधारित था। उनके अनुसार भाषा का विकास चार चरणों में हुआ।

1] पहली सीढ़ी भाव व्यंजन ध्वनियों की है। जब मनुष्य भय, क्रोध, दुख, हर्ष, भूख, प्यास, मैथुनेच्छा आदि के कारण बंदर की तरह इस प्रकार की ध्वनियों द्वारा अपने भावों को व्यक्त करता था।

2] दूसरी सीढी अनुकरणात्मक शब्दों की है। विभिन्न जीव, जंतु तथा निर्जीव पदार्थों की ध्वनियों के अनुकरण पर शब्द बने होंगे।

3] तीसरे चरण में मनुष्य ने स्वयं अपने अंग संकेत (विशेषतः हाथ) का अनुसरण किया। इसमें केवल स्थूल शब्द बने होंगे।

4] चौथे चरण में मानव के मानसिक विकास के साथ सूक्ष्म भावों को व्यक्त करने के लिए सूक्ष्म शब्द बने होंगे।

❖ समीक्षा –

1] अन्य सिद्धांतों से यह सिद्धांत श्रेष्ठ नहीं।

2] अनुकरण कि बात जचंती तो है ले किन अनुकरण कौन करता है? हाथ या पैर के अनुकरण का क्या अर्थ है?

8) टा टा सिद्धांत : – यह सिद्धांत इंगित सिद्धांत जैसा ही है। सिद्धांत के आरंभ में आदिम मानव काम करते समय जाने-अनजाने उच्चारण अवयवों से काम करने वाले अवयवों की गति का अनुकरण करता था और इस अनुकरण में कुछ ध्वनियों और ध्वनि संयोगों से शब्दों का उच्चारण हो जाया करता था। इन्ही ध्वनियों और शब्दों से धीरे-धीरे भाषा का विकास हुआ।

❖ समीक्षा –

1] जिन कारणों से इंगित सिद्धांत को अस्वीकार कर दिया गया वही कारण टा टा सिद्धांत की अस्वीकार्यता पर भी लागू होता है क्योंकि ऐसा अनुकरण न तो आज का सभ्य मानव करता है न असभ्य। और फिर बंदरों में भी इस प्रकार की अनुकरण प्रवृत्ति नहीं दिखाई देती।

9) संगीत सिद्धांत : (सिंग साँग) –

इस सिद्धांत में भाषा की उत्पत्ति मानव के संगीत से मानी जाती है। डार्विन तथा स्पेंसर ने इसे कुछ रुपों में माना था। येस्पर्सन भी कहते हैं कि भाषा की उत्पत्ति खेल के रूप में हुई। उच्चारण अवयव खाली वक्त में गाने के खेल के उच्चारण करने में व्यस्त हुए। गाने से प्रारंभिक अर्थविहीन अक्षर बने और फिर धीरे-धीरे अर्थ बने।

आदिम मनुष्य भावुक अधिक रहा होगा और गुनगुनाने में उसे अधिक आनंद आता था। उसके गुनगुनाने से अक्षर बने फिर भाषा तैयार हो गई।

इस सिद्धांत का संबंध संगीत से अधिक प्रेम से हैं। अतः कुछ लोग इसे प्रेम सिद्धांत भी कहते हैं।

10) संपर्क सिद्धांत :-- इस मत के प्रतिपादक जी. रेवेज है जो मनोवैज्ञानिक थे। इस सिद्धांत में 'संपर्क' का अर्थ सामाजिक जीवों में आपसी संपर्क करने की सहज प्रवृत्ति। समाज का निर्माण इसी प्रवृत्ति के कारण हुआ है। आदिम मनुष्य के भी छोटे-छोटे वर्ग थे। उनमें आपस में प्रारंभिक भावनाओं भूख, प्यास, कामेच्छा, रक्षा आदि को व्यक्त करने के लिए विभिन्न स्तरों पर तरह-तरह के संपर्क स्थापित किए जाते थे। इन संपर्कों के लिए स्पर्श का भी सहारा लिया जाता था और मुख से उच्चारित ध्वनियां भी सहायक होती थी। जैसे-जैसे संपर्क की आवश्यकता बढ़ गई वैसे-वैसे ध्वनियों का विकास हुआ।

❖ समीक्षा – प्रो. रेवेज ने बाल मनोविज्ञान, पशु मनोविज्ञान तथा आदिम और अविकसित मनुष्य के मनोविज्ञान के सहारे जो यह सिद्धांत रचा है पूर्णतः तर्क सम्मत है लेकिन इसमें मनोवैज्ञानिक ढंग से ही भाषा उत्पत्ति और विकास का विवेचन किया है। हम अधिक निकट जाकर भाषा का ठोस रूप जानना चाहते हैं।

11) प्रकृति सिद्धांत :-- प्रकृति ने जिस प्रकार मनुष्य को उत्पन्न किया उसी प्रकार उसकी भाषा को भी यह मान्यता जर्मन विद्वान हर्डर की थी इसीलिए इस सिद्धांत का नाम प्रकृति सिद्धांत रखा। मनुष्य ने जब दो पैरों पर चलना सीखा तब उसके हाथ अन्य कार्यों के लिए मुक्त हो गए। जब हाथ भी नाना प्रकार के कार्य में व्यस्त रहने लगे तो भावाभिव्यक्ति के लिए मुख का उपयोग किया जाने लगा। वैसे भी मुंह को खाने के अलावा और कुछ काम नहीं था। इस प्रकार भाषा का विकास हुआ।

❖ समीक्षा -- इस सिद्धांत से मनुष्य का विकास क्रम मिलता है, भाषा का नहीं। भाषा के विकास का स्वरूप क्या था? उसके आद्य शब्द कौन से थे? उससे संप्रेषण किस प्रकार होता था? इसका समाधान नहीं मिलता।

12) समन्वय सिद्धांत :-- कुछ भाषा वैज्ञानिक उपर्युक्त सभी सिद्धांतों की और अव्याप्ति या मर्यादाओं को देखकर सब के समन्वय को भाषा की उत्पत्ति का आधार मानते हैं क्योंकि कोई एक सिद्धांत परिपूर्ण नहीं है। कुछ शब्द अनुकरण से उत्पन्न हुए तो कुछ श्रम के कारण। इस तरह एक-एक सिद्धांत को अलग-अलग मानने के बदले उनके समन्वय को ही भाषा की उत्पत्ति का कारण मानना निश्चित ही आधी उचित लगता है।

❖ समीक्षा – सभी सिद्धांतों को समन्वित करने पर भी अंशतः भाषा की उत्पत्ति का समाधान हो जाता है। इन सभी सिद्धांतों से यह ज्ञात हो जाता है कि प्रारंभ में मानव मुक था, पर जो प्राणी वाणी संपन्न थे वे जहां के तहां रह गए और मुख मानव ने ही प्रगति की।

संदर्भ ग्रंथ –

1) भोलानाथ तिवारी, हिंदी भाषा,किताब महलएजेंसीज पटना, संस्करण- 2002
2) देवेन्द्रनाथ शर्मा,दीप्ति शर्मा, भाषा विज्ञान की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन,दिल्ली, संस्करण 2001
3) डॉ. मिथिलेश शर्मा और अन्य भाषा के विविध रूप और संचार माध्यम,विनय प्रकाशन अहमदाबाद, संस्करण 2003